मिर्जा का स्वेटर

के. पी. सक्सेना

यह पूछे जाने पर कि मिर्जा सिर्फ एक ही पल्ले में ऊन के गोले समेत, इस निर्माणाधीन स्वेटर को उतारे बगैर क्यों निकल पडे, मिर्जा बमक उठे, "तुम क्या जानो कि रुहानी इश्क क्या होता है ? जो चीज इतनी मेहनत और मोहब्बत से उन्होंने हम पर चढ़ाई है, उसे उतार फेंकें ? हमें जरा बाजार से मसूर की दाल लाने की जल्दी थी। इस पल्ले को उतारने में एक उम्र लग जाती। सो सोचा कि लाओ, पल्ले-गोले समेत ही बाजार हो आएं। जमाना देख ले कि शाहजहां और मुमताज बीवी का इश्क अभी जिन्दा है। बेहतर होगा कि गोला तुम सम्भाल लो और हमारे पीछे-पीछे बाजार तक चले आओ।" अभी हम गोला उठाकर झाड़-पोंछ ही रहे थे कि हमारी भावज (बेगम मिर्जा) बुर्के की छांव तले तैश में फुंकारती हुई दाखिल हुई और किचिन में दाखिल होकर हमारी बीबी को भी घसीट लाई। सारी पृष्ठभूमि उन्हें समझाई और मिर्जा को वो-वो धुली-पुंछी सुनाई कि अगले का पाटिया गुल और ढिबरी टाइट हो गई।

बेगम भाभी के टोटल गुस्से का सारांश यह था कि अक्ल के नाम पर पैदल मिर्जा, जल्दबाजी में बच्चे के स्वेटर का पल्ला डाट आए थे, और अपने स्वेटर के पल्ले में सलाइयों समेत बच्चे को लपेट कर रख आए थे।दोनों ही 'अण्डर कन्स्ट्रकशन' स्वेटरों का डिजाइन एक था और पुरानी उधड़ी हुई धुली ऊन से बन रहे थे। मिर्जा सिर झुकाए बगलें झांक रहे थे, और मैं सोच रहा था कि जब बच्चे के स्वेटर का पल्ला मिर्जा पर फिट आ गया तब मिर्जा के स्वेटर का पल्ला बच्चे पर सही क्यों नही उतरा ? क्या आज के दौर में बाप-बेटों में पल्ले-भर मुहब्बत भी बाकी नहीं रह गई! ऊंट और ऊंट में कोई फर्क नहीं होता...मगर बच्चों और बच्चों में फर्क होता है। बच्चे अमीर और गरीब होते हैं... भूखे और सजे-धजे होते हैं...मगर ऊंट हमेशा नंगा होता हैं! ऊंट अमीर और गरीब कभी नहीं होता!...आजादी के इन महत्त्वपूर्ण ३६ वर्षों का असर बच्चों पर भले ही पड़ा हो...ऊंटों पर नहीं पड़ा।

ऊंट के बारे में एक पंजाबी कहावत हैं कि 'जट चालीस दा...बोता पैंतालीस दा'...बोता ऊंट के बच्चे को कहते हैं! अत: ऊंट के बच्चे की कीमत हमेशा ऊंट से ज्यादा होती है| इन्सानों मे सिर्फ राजनीतिक बच्चों की कीमत ही ज्यादा होतीहै| आम आदमी का अभावग्रस्त बच्चा दो कौड़ी का।...न खाने को, न पहनने को...बिना वजह पृथ्वी पर आने का पाप भोगता है आदमी का बच्चा। ...अब आप कृपया ऊंटों और बच्चों की एक घटना सुनो... दिल्ली और जयपुर के बीच राष्ट्रीय मार्ग पर टूरिस्टों के मनोरंजन के लिए राजस्थान टूरिस्ट डेवलपमेंट कारपोरेशन ने 'मिड वे' नाम का एक उम्दा रेस्त्रां बनाया हुआ है। यों भी भूख के देश में आलीशान रेस्त्रां बनाना एक अच्छी बात है। यहां बच्चों के लिए ऊंट की सवारी

की व्यवस्था है। यह भी एक अच्छी बात है। बचपन रहते तक ही बच्चा ऊंट की सवारी कर सकता है। बड़ा होने पर राजनीति और व्यवस्था के ऊंट आदमी की पीठ पर सवार हो जाते हैं और देश धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगता है।

खैर...पिछले दिनों दिल्ली के मार्डन स्कूल के बच्चों का एक दल बस सें जयपुर जा रहा था। बच्चे इस रेस्त्रां में उतर गये और ऊंट की सवारी करने लगे। थोड़ी ही देर में जाने किसने कैसी हवा फूक दी कि यच्चों को ऊंट से उतार दिया गया...पैसे वापस कर दिए गए और ऊंट की सवारी बन्द हो गई। अब चक्कर क्या था कि एक सहकारी उच्च अधिकारी अपनी बच्ची के साथ आए हुए थे जो ऊंट की सवारी की जिद कर रही थी। अत: साधारण बच्चों को ऊंट से उतारकर ऊंट किसी खास 'बच्ची' के लिए रिजर्व कर दिया गया। इस घटना पर न बच्चों ने बुरा माना, न ऊंट ने। दोनों ही जानते थे शायद कि 'बाल दिवस'का स्वांग रचाने वाले इस देश में, बच्चे और बच्चे में जमीन और आसमान का फर्क होता है।

..कुछ बच्चे जन्म से ही मुंह में चांदी का चम्मच और सत्ता का शहद लेकर पैदा होते है। शेष सारे बच्चे सिर्फ भूख और अभावों की गर्द लेकर जन्म लेते हैं। ये 'घटिया' बच्चे न बाल दिवसों की रौनक बन सकते हैं, न ही ऊंट की सवारी के योग्य होते हैं। दिल्ली के मार्डन स्कूल के बच्चे फिर भी अच्छे खाते-पीते घरानों के है।उन्हें भी ऊंट की सवारी के आनन्द से वंचित कर दिया अफसर शाही ने| अब जरा उस बच्चे के बारे में सोचिए जो अधनंगा है...भूखा है...सिर्फ बच्चा कहलाने का अपराधी है। वह सिर्फ दूर से यह देख सकता है कि ऊंट कैसा होता है और 'बड़े' बच्चे इस पर कैसे सवारी करते हैं।

घुटी हुई लालसओं का यही जहर आगे चलकर अभावग्रस्त बच्चों को अपराधी बनाता है तो हम कहते हैं कि बाल-अपराध बढ़ रहे हैं।..यही नन्हे-नन्हे कुचले हुए अरमान एक दिन जहर और समाज-विरोध का घिनौना ज्वालामुखी बन जाते है। आप किसी बच्चे से उस की रोटी छीन सकते हैं...मिट्टी का खिलौना छीन सकते हैं...मगर उसके मन की नन्ही-नन्ही कामनाएं नहीं छीन सकते। कल जो लोग इस बच्चे को वोट की लाइन में खड़ा करेंगे, वे आज इसे दो क्षण ऊंट की सवारी या मिट्टी की एक छोटी-सी चिड़िया देने से क्यों कतराते हैं? ...कितनी बाल संस्थाएं...कितने ही शिशु केन्द्र एवं बाल सुधार गृह अपने बड़े-बड़े बोर्ड खोखले ढोलों जैसे लटकाए बैठे हैं, पर देश का आम बच्चा आज भी उतना ही रीता है जितना अपने बचपन में मैं था। बच्चे के हिस्से में, इन ३६ वर्षों में सिर्फ तिरंगे झण्डे की तस्वीर आई है जिसके रंग देखकर वह खुश हो लेता है। कहां हैं वे लोग जो कहते हैं कि इस देश से 'बाल-श्रम' (चाइल्ड लेबर) खत्म हो रहा है ? ठंड में ठिठुरते हजारों मासूम आज भी ईटें ढो रहे है...गाड़ी खींच रहे है...दूसरों के बर्तन मांज रहे हैं। दूसरों की फेंकी हुई जूठन ही इन बच्चों के हिस्से का प्रजातंत्र है...आजादी है।

...महाकवि मिल्टन ने एक बार कहा था कि मैं कई-कई जन्म सिर्फ बच्चा बने रहने को तैयार हूँ...शर्त यह है कि मुझे एक बच्चे की तरह भरपूर जीने का अधिकार मिले। मिल्टन नहीं रहे इस संसार में...सिर्फ कामना रह गई जो आज अधिकांश बच्चों के चेहरे पर एक सपना बनकर मंडराती रहती है।...बच्चे ऊंट को देखते हैं, ऊंट बच्चों को देखता है... दोनों के बीच में एक सम्पूर्ण समाजवाद की दूरी है। खुली कारों पर से सड़क के बच्चों पर माला फेंकना और बात है...बन्द कोठरियों में उनके पेट की भूख और तन की बीमारी आंकना और बात है। ...मदर टेरेसा जैसी हमदर्द हस्तियां सदियों में कहीं एक पैदा होती हैं।-३६ वर्ष से गाल-बजाए जा रहे हैं बाल कल्याण के नाम पर।मजदूर का बेटा मजदूर और भिखारी का बेटा भिखारी ही पैदा हो रहा है। भूख के ढेर पर भूख ही जन्म ले रही है।... अधिकारों की होड़-सी लगी है। जिसके पास नन्हे बच्चों को ऊंट पर से उतार सकने का अधिकार है, वह उसी का भरपूर उपयोग कर रहा है। एक अपने बच्चे की खुशी के लिए कितने ही बच्चों की आंखों से खुशी की चमक छीनी जा रही है। यह उपलब्धि हैं नेहरू के सपनों की|

...मैं देश के मामले में टांग अड़ाना नहीं चाहता। जिनका देश है वह देश को जिधर चाहें मोड़ ले जाएं। मगर बच्चों के मामले में बोलने का मुझे हक है। मैं बच्चों का लेखक हूं...खुद बच्चा रह चुका हूं...बच्चों के अधबुने सपनों की एक पूरी दुनिया देखी है मैंने।...इन अरमानों से खेलता है कोई तो मन कसक उठता है। आप भले ही बाल संग्रहालय, बाल उद्यान, ऊंट और हाथी-घोड़े हटा लो! मगर जब तक ये हैं, इन पर सब बच्चों का समान हक है ! अफसर शाही के पांव पसारने को और भी जमीनें हैं ! चंद बच्चों के चेहरों की हंसी छीनकर अफसरशाही सुर्खरू नहीं होती...स्याह और बदनाम हो जाती है।...बच्चों के भोले मन तो यों भी भी सब कुछ बहुत जल्द भूल जाते हैं! बच्चे जो ठहरे!